ओमप्रकाश वाल्मीकि की कहानियों में चित्रित दलित समस्याएँ

एन.बी.एन.वी. गणपति राव,
पीएचडी शोधार्थी,
हिंदी विभाग, पी.आर. कॉलेज,
आदिकवि नन्नय विश्वविद्यालय,
राजमंड्री, आंध्रप्रदेश।

बीज शब्दः दलित, साहित्यकार, पीड़ा, समाज, निम्न वर्ग।

ओमप्रकाश वाल्मीकि की कहानियाँ दलित जीवन का यथार्थ चित्रण है। इनके लेखन के बारे में कुछ लोगों का यह कहना है कि इनकी कहानियाँ अविश्वसनीय और अतिरंजनापूर्ण हैं। लेकिन भोगे हुए यथार्थ, दर्द, पीड़ा, यातना और प्रताडना ही अविश्वसनीय और अतिरंजना हो तो ओमप्रकाश वाल्मीकि को अविश्वसनीय और अतिरंजना का लेखक कहना कोई गलत नहीं होगा। मराठी में एक कहावत है "स्वतः मेल्याशिवाय स्वर्ग दिसत नाही" अर्थात स्वयं मरे बिना स्वर्ग दिखाई नहीं देता। तात्पर्य यह कि दलित जीवन की पीड़ा गैर दलित को सरलता और आसानी से समझ में नहीं आती। प्रा. अरूण कांबले जी के शब्दों में "जिसका जलता है वही उसकी व्यथा जानता है, दलितों के दुःख-दर्द को अनुभूत करनेवाला मनुष्य ही दलितों के बारे में लिख सकेगा। फुले जी को जो वेदना महसूस हुई वह अन्य लोगों को महसूस नहीं हुई क्योंकि फुले जी ने इस दुःख का प्रत्यक्ष अनुभव लिया हुआ था।" इस कथन के अनुसार ही ओमप्रकाश वाल्मीकि ने स्वयं अपने जीवन में पीड़ा भोगी है। इस विषय को लेकर नामवर सिंह कहते हैं- "जन्मना दलित होने के कारण अनुभव के जिन आसंगों से एक आदमी को गुजरना पड़ता है, उसका प्रत्यक्ष अनुभव स्वयं एक दलित को जैसा है, अपनी पूरी अनुभूतियों व कल्पना का विस्तार करने के बावजूद मैं, जो एक गैर-दलित हूँ, उस अनुभव को उसी तीव्रता और तनाव से आपको अनुभव नहीं करा सकता।" इस विवेचन से स्पष्ट है कि दलितों की पीड़ा अहम होती है और उसे समझने के लिए दलित ही चाहिए। यहाँ सुधीश पचौरी का कथन द्रष्टव्य है "जिस तरह औरत के औरतपन को पुरूष जैविक रूप में नहीं लांघ सकता उसी तरह गैर दलित, दलित के अनुभव संसार में जैविक ढंग से प्रवेश नहीं पा सकता। ओमप्रकाश वाल्मीकि ने ऐसी असीम पीड़ा को देखा है, भोगा है, जाना है, परखा है और अंततः शब्दबद्ध किया है। हजारों साल के जातीय दम्भ और वर्चस्व के साथ जीनेवाले घोर अमानवीय, असहिष्णु और बर्बर समाज से हृदय परिवर्तन की उम्मीद करना मृगजल की कल्पना करने जैसा है। फिर भी सवर्णों से थोड़ी बहुत इन्सानियत की अपेक्षा कर भविष्य के प्रति आशावादी दृष्टिकोण रखना दलितों के लिए आकाश कुसुम की कल्पना नहीं होगी। ओमप्रकाश वाल्मीकि की कहानियाँ कुछ इस प्रकार की ही अपेक्षा रखती

हैं। ओमप्रकाश वाल्मीकि ने अपनी कहानियों में समाज में चली आ रही रुढ, परंपरा और सवर्ण समाज का दलितों के प्रति दृष्टिकोण, दलितों की भावना एवं उनकी समस्या आदि अनेक विषयों को छूने की कोशिश की है।

1. जातिवाद समस्या :

ओमप्रकाश वाल्मीकि ने अपनी कहानियों में कुछ ऐसी समस्याओं का चित्रण किया है जो सिर्फ जाति के कारण उपजी हैं। लेकिन उसकी पीड़ा तथा वेदना तमाम मानव जाति को सोचने के लिए मजबूर कर देती है। 'कहाँ जाए सतीश' नामक कहानी में सतीश नाम का एक छोटा-सा बालक है, जो अपने माता-पिता के खिलाफ जाकर खुद काम करके शिक्षा हासिल कर रहा था। उसके माता-पिता की यह इच्छा थी कि सतीश महानगर पालिका में सफाई कर्मचारी बनें । लेकिन सतीश पढ़ना चाहता था, ताकि उसके माता-पिता एवं मोहल्लेवाले जिस तरह से जीवन जीते हैं, उस तरह के जीवन से उससे छुटकारा मिल सके। सतीश के अध्यापक ने उसे पंत के परिवार में रहने के लिए छोटी-सी जगह दिलवाई थी। सतीश अपनी पढ़ाई पूरी ईमानदारी और लगन से कर रहा था। वह पंत के परिवार का हिस्सा ही बन गया था। पंत जी की एक बेटी है जो सातवीं कक्षा में पढ़ती है। उसने सतीश को राखी बांधी थी। ऐसा कोई भी वातावरण नहीं था. जिससे यह साबित हो सके कि सतीश पंत के परिवार का सदस्य नहीं है। एक दिन अचानक सतीश के माता-पिता पंत के घर में आते हैं उनकी वेषभूषा और रंग-ढंग देखकर मिसेस पंत के अंतर्मन में खलबली मच रही थी। सतीश छह महीनों से घर से गायब है, इसलिए उनके मन में सतीश के प्रति करूणा एवं कातरता थी। सतीश के माता-पिता की आँखें सतीश को देखने के लिए तरस रहीं थीं। लेकिन उनकी ओर देखकर मिसेस पंत क्रोधित होती है। वह यह जानना चाहती थी कि यह गंदे लोग कौन हैं? लेकिन यह गरीब, कमजोर और गंदे लोग सतीश के माता- पिता हैं यह जानकर अचानक मिसेस पंत पर आसमान टूट पड़ता है। वह एकदम चौंकती है। सतीश इनका बेटा है इसपर उसे विश्वास नहीं हो रहा था। मिसेस पंत के अचानक इन्सानियत के सारे गुण नष्ट हो जाते हैं। सतीश एक भंगी होकर मेरे घर में रह रहा है? उसे लगा कि जैसे सारी चेतना लुप्त हो रही है। मिसेस पंत ने उस रात सतीश को घर से निकालने का निश्चय किया। सतीश को सारी हकीकत मालूम हो जाने पर उसके मन में एक बात पनपति रही थी कि क्या भंगी होने से रिश्ते टूटते हैं? सुदर्शन पंत अपनी पत्नी को समझा रहे थे "जाएगा, बच्चा ही तो है... सुबह चला चाएगा अब रात में कहाँ अरे तेरी बेटी को इतना प्यार दिया है उसने... भाई है उसका उसे इस तरह निकालोगी" पंत की इन बातों से भी मिसेस पंत के मन का परिवर्तन नहीं हुआ। मेरी बेटी का भाई होने के लिए एक होम ही रह गया था? ऐसी नफरत भरी बातों से सतीश को लग रहा था जैसे किसी ने गर्म सलाखों से उसके जिस्म पर पोर पोर बाँध दिया है। सिर्फ शिक्षा के लिए छोटी उम्र में काम करनेवाला छोटा सा सतीश उस रात दस बजे पैदल छह किलोमीटर दूर फैक्टरी जाता है। इस आशा से कि ऐजाज साहब एक रात रहने के लिए जगह देंगे। सतीश की सारी हकीकत

सुनकर ऐजाज साहब कहते हैं “यदि मिसेज पंत ने तुम्हें निकाल दिया है या तुम अपने माँ-बाप का घर छोड़ आए हो तो मैं इसमें क्या कर सकता हूँ और फिर मैं तो धंधेवाला आदमी हूँ। मेरा और तुम्हारा संबंध सिर्फ धंधे का है। इसके अलावा तुम्हारा और मेरा कोई संबंध नहीं है। यह तुम्हारी समस्या है, तुम निबटो, मैं क्या कर सकता हूँ। मैंने कोई आश्रम तो खोल नहीं रखा है कि जो चाहे चला आए।“ ऐजाज साहब के इन शब्दों ने सतीश के बाल मन पर आघात कर दिया। उनके कथन से सतीश के सारे सपने चकनाचूर हो गए। क्या भंगी समाज में जन्म लेना गुनाह है? जब तक जाति का भूत हमारे समाज में मँडराता रहेगा तब तक सतीश जैसे मासूम बच्चों के जीवन में मिसेज पंत जैसी औरतें उगती रहेंगी। रात के अँधेरे में झुकी-झुकी निगाहों से अपनी तमाम आशाओं को मृत देखकर थके हारे कदमों से सतीश फैक्टरी से बाहर निकल जाने के लिए विवश हो जाता है। उसके कदम सुस्त और निढ़ाल पड़ रहे थे। गहरा अंधेरा और भी गहरा हो गया था। सतीश सिर्फ चल रहा था, लेकिन कहाँ जा रहा था यह स्वयं नहीं जानता था। परंतु चलना उसके लिए जरूरी था। इसलिए वह चल देने को अभिशप्त था। स्थान छोड़ने के लिए विवश सतीश जाति से दलित था। सवर्णों की यह जातिवादी मानसिकता ने ही उसे घर से निकाल दिया। स्पष्ट है कि विवेच्य कहानी में लेखक ने जातिवाद की समस्या को उद्घाटित कर जातिवाद के कारण दलित जीवन की दयनीयता को उद्घाटित किया है।

‘सपना’ कहानी में शिरोड़कर नाम के अधिकारी हैं। उनका सपना था कि कारखाने की अवासी कॉलोनी में एक मंदिर बनें। अवासीय कॉलोनी में सब सुविधा थी, सिर्फ एक मंदिर की कमी थी। जिसे शिरोड़कर ने सपने के रूप में देखा था। उन्होंने अपने अधिकार में एक समिति की स्थापना की, जो मंदिर निर्माण में कार्य करें। अचानक शिरोड़कर का तबादला होने के कारण उनकी जगह राधास्वामी आये तमाम कष्ट और मतभेद में मंदिर समस्या खड़ी हो गई। क्योंकि मंदिर सूची में बहुत सारे नाम जुड़ गए। लेकिन राधास्वामी नटराजन के कहने पर बालाजी मंदिर का प्रस्ताव पारित करते हैं। चंदा जमा करने के लिए नटराजन अपने सहयोगी ऋषिराज को स्थान देते हैं। ऋषिराज अपने दलित मित्र अनिलकुमार गौतम के सहयोग से इस पवित्र कार्य में बड़ी लगन और तत्परता से काम करता है। अनिलकुमार गौतम एस. सी. है लेकिन ऋषिराज का विश्वसनीय और नेक मित्र है। जो मंदिर निर्माण कार्य में काफी सहयोग देता है।

मंदिर पूर्ण हो जाने के उपरांत बालाजी मूर्ति की प्राण प्रतिष्ठा के अवसर पर पंडाल लगाया गया था। जहाँ कॉलोनी के लोग आने शुरू होते हैं। ऋषिराज के परिवार को साथ लेकर अनिलकुमार गौतम पंडाल में आगे बैठता है। लेकिन इस कारण नटराजन एकदम चौंक जाता है और जाति की खोट मन में रखकर उसे जूते की रखवाली करने का काम बताता है इस संदर्भ में सुदेश तनवीर कहते हैं “जब तक हम अपनी कथित धर्म सम्मत शास्त्रीय व्यवस्था को बदलने के लिए उठ खड़े नहीं होते तब तक समाज से जातीय दंश को निकाल पाना लगभग असंभव है।“ “गौतम अपनी फैमिली को पंडाल से पीछे नहीं ले जाता। लेकिन नटराजन अपनी जिद्द पर अड़ा रहता है। इतने में ऋषिराज आता है, नटराजन

उसके सामने अपनी मन की बात उगलता है" पूजा अनुष्ठानों में उन्हें आगे नहीं बैठाया जा सकता? यह रीत है, शास्त्रों की मान्यता है।" "अपने मित्र के प्रति अपमानित व्यवहार देखकर ऋषिराज को गुस्सा आता है और कहता है" मिस्टर नटराजन यह ज्ञान आपको आज ही प्राप्त हुआ है कि गौतम एस.सी है। जब वह दिन-रात अपना खून पसीना बहा रहा था इस मंदिर को खड़ा करने में तब आप नहीं जानते थे. कि वह एस.सी. है। तब आपने क्यों नहीं कहा कि जो एस. सी. हैं वह मंदिर के काम में हाथ न बंटाए" ऋषिराज पूरी शक्ति से विरोध करता है। जिससे पंडाल का वातावरण बिगड़ जाता है। अपने मित्र को पंडाल से उठाने के पक्ष में ऋषिराज नहीं था। उसे समझाने की सारी सवर्ण कोशिशें बेकार हो जाती है। गौतम का हाथ पकड़कर वह पंडाल के बीचोबीच ले जाता है, माइक पर कुछ कहने से पहले ही नटराजन, और उसके साथी बालाजी की घोषणा देते हैं। क्रोधित होकर ऋषिराज पंडाल गिरा देता है। पंडाल में भागदौड़ मच जाती है। गौतम एस.सी. है सिर्फ इसी कारण नटराजन ने उसका विरोध किया जिसका परिणाम इतना भयंकर हो जाता है। जातिवादी मनोवृत्ति ने सवर्णों की मानसिकता को संकुचित बना दिया है। इससे जातिवादी भावना को बढ़ावा ही मिल रहा है। इससे दलित सानंद जीवन जीने से कोसों दूर चले गए हैं 'बजरग बिहारी' का कथन है "दलित कहानियों की कथा भूमि प्रायः सामान्य प्रसंगों से नहीं बनती दलित समाज की पीड़ा उनके साथ होनेवाले अपमान जनक व्यवहारों पर ही कहानीकार की दृष्टि जाती है।"" ओमप्रकाश वाल्मीकि ने अपनी कहानियों के द्वारा यही दायित्त्व सफलता से निभाया है।

२. बलि प्रथा समस्या :

'भय' कहानी का नायक दिनेश जिसके घर में देवी माई-मरदान को सुअर बलि चढ़ाने की परंपरा है। लेकिन दिनेश ऐसी परंपरा के खिलाफ है। न जाने कितने वर्षों से चली आ रही इस प्रथा को अचानक पूर्णविराम देना दिनेश के घरवालों को भगवान-भक्ति और परंपरा पर कठोर आघात कर देने जैसा लगता है। दिनेश ने इस संबंध में अपनी माँ से कहा था "माँ, पूजा ही करना है तो फल-फूल, हलवा-पूरी से कर लो... "लेकिन नहीं मानी। माँ उसे कहती है "जीते जी तेरे पिता जी ने गाई-मरदान को पूजने ना दिया, शादी के वक्त मेरे बाप ने साफ-साफ कह दिया था कि हमारे घर में माई मरादान की पूजा होवे है। जो लड़की के गेल जावेगी। वहाँ भी तुम्हें माई मरदान को पूजना पड़ेगा। उस रोज तो कुछ ना बोले बाद में बदल गए। बेटे, दीनू कोई अपने देवी-देवताओं को छोड़ सकता है भला! अपनी जड़ों को छोड़कर पेड़ की भी कोई गत है। "माँ की ऐसी जबरदस्ती पर दिनेश की एक न चली। उसके मामा का भी यही कहना था कि वह पढ़ लिखकर अपनी परंपरा का पूजा-पाठ बंद करना मूर्खता है। माँ के मन में छिपा एक डर भी था कि. माई मरदान की कोप से ऐसा वैसा कुछ न हो। मामा ने माई मरदान की दहशत की कहानियाँ सुनाकर उनके मन में डरावना खयाल आया था। इसके कारण मजबूरन दिनेश को परिस्थिति से न चाहते हुए भी समझौता करना पड़ा। दिनेश सुअर लाने के लिए किशोर को साथ लेकर चला जाता है। सुअर खरीदने पर उसे काटने की समस्या उत्पन्न हुई। सुअर को कॅलोनी में

लेजाकर काट नहीं सकते थे। क्योंकि वहाँ किसी को मालूम नहीं था दिनेश निम्न जाति का है। किशोर कहता है, पूजा तुम्हारी हाथों से होनी है तो तुझे ही काटना पड़ेगा। "काफी जिद्दोजहाद के बाद दिनेश ऊपरी तौर पर तैयार तो हो गया, लेकिन अंतर्मन तैयार नहीं था। उसे लग रहा था जैसे वह कोई अपराध करने जा रहा है।" बच्चे की चिचियाहट से मादा सुअर विकराल रूप धरकर दरवाजे पर लगातार टक्कर मार रहीं थी। दिनेश ने माई मरदान का स्मरण करके सुअर पर छुरी चलाई, वह तड़प कर शांत हो गया था और उसको टुनकर गोश्त का बोरा उठाकर चले जाते हैं। दिनेश को डर था कि कोई इन्हें देख न ले। किसी को पता न चले कि हम निचली जाति से हैं और सुअर का गोश्त खाते हैं। इसलिए बड़ी सावधानी से घर जाते हैं। दिनेश डर के मारे पिघलता जा रहा था। विचित्र अंधश्रद्धा ने उस अजीब से चक्रावात में फँसा दिया था। इस संदर्भ में पंडित नेहरू जी का कथन द्दष्टव्य है "अधिकांश सामाजिक समस्याओं के मूल में अंधविश्वास रूढ़ियों का आँखें मूंदकर पालन करना है।" "दिनेश के मन में दूसरा डर था कि अक्सर रामप्रसाद तिवारी इनके घर आते थे, वह आज न आ जाए। दुर्भाग्यवश तिवारी आ ही जाता है। माँ उसे झूठ बोलके किसी तरह निकाल देती है, वह जाते वक्त कहता है, कि दिनेश को उसने गंदी बस्ती में देखा था।

३. अनपढ़ लोगों की समस्या :

अनपढ़ लोगों को बड़े उच्च कुल के लोग मदद के नाम पर फँसाते हैं। अनपढ़ की प्रामाणिकता का गलत फायदा उठाकर उसका शोषण करनेवालों मानवता रहित संवेदना शून्य समाज की समस्या का प्रतिनिधित्व 'पच्चीस चौका डेढ़ सौ' कहानी करती है। सुदीप को स्कूल में मास्टरजी पहाड़े कंठस्थ करने को कहते हैं। घर में पहाडे रटते वक्त पच्चीस चौका सौ कहने पर सुदीप के पिताजी उसे टोकते हैं और पच्चीस चौका सौ नहीं डेढ़ सौ होते हैं ऐसे आत्मविश्वास के साथ कहते हैं। पिताजी की गलती पर सुदीप की एक न चली। स्कूल में पच्चीस चौका डेढ़ सौ कहने पर मास्टरजी को गुस्सा आ जाता है। और उसपर बिफर पड़ते है "अबे कालिए डेढ़ सौ नहीं सौ... सौ। सुदीप ने डरते डरते कहा 'मास्साहब पिताजी कहते हैं, पच्चीस चौका डेढ़ सौ होते हैं।" मास्टरजी उसे थप्पड़ लगाते हैं। सुदीप के समझ में नहीं आ रहा था कि पिताजी झूठ क्यों बोलेंगे? एक दिन पिताजी उसे तीस वर्ष पूर्व की बात बताते हैं। चौधरी से तेरी माँ जब बीमार पड़ी थी तब व्याज से पैसे लिये थे। पिताजी की नजर में तो चौधरी देवता है। उस वक्त चौधरी ने कहा था "मैंने तेरे बुरे बखत में मदद करी ती। ईब तू ईमानदारी ते सोरा पैसा चुका देना। सौ रूपए पर हर महीने पच्चीस रूपए ब्याज के बनते हैं। चार महीने हो गए हैं। व्याज-व्याज के हो गए है पच्चीस चौका डेढ़ सौ। तू अपणा आदमी है तेरे से ज्यादा क्या लेणा। डेढ़ सौ में से बीस रूपए कम कर दे। वीस रूपए तुझे छोड़ दिए। बचे एक सौ तीस। चार महीने का व्याज। एक सौ तीस अभी दे दे। बाकी रहा मूल जिब होगा दे देणा। महीने के महीने व्याज देते रहणा।" "सुदीप के पिताजी सिर्फ इसलिए खुश थे कि बीस रूपए चौधरी ने छुट दिए। लेकिन चौधरी 'पच्चीस चौका डेढ़ सौ' बोलकर उन्हें लूटता रहा, इसलिए कि वे अज्ञानी थे। इस संदर्भ में

तेजसिंह कहते हैं "आजादी के इतने साल बाद भी जब दलितों को सामाजिक आर्थिक शोषण से मुक्ति और न्याय नहीं मिला तो वे सोचने के लिए मजबूर होंगे कि यह आजादी आखिर किसके लिए है।" बहुत वर्षों बाद सुदीप अपनी कमाई के पैसों से पच्चीस-पच्चीस रूपये के गठ्ठे लगाकर अपने पिताजी को समझाता है कि पच्चीस चौका सौ होते हैं। तब पिताजी ठीक समझते है और चौधरी जी की लूट के प्रति गुस्से से चौधरी पर अपशब्दों की बौछार करते हैं। अनपढ़ होने के कारण सुदीप के पिताजी की चौधरी द्वारा लूट एक समस्या के रूप में प्रस्तुत हुई हैं। अपनी कहानी के जरिए अनपढ़ लोगों की समस्या को उजागर करना ओमप्रकाश वाल्मीकि मुख्य उद्देश्य है।

4. निवास की समस्या :

हमारे समाज में ऐसे कई लोग है जिन्हें दो वक्त की रोटी भी नसीब नहीं होती। लेकिन वे हारते नहीं। अपने तमाम कष्ट और कोशिशों पर विश्वास करके अच्छे भविष्य और अच्छे सपनों की तलाश में निकल पड़ते हैं। ऐसे ही गरीब पति-पत्नी अपना भविष्य उज्ज्वल करने हेतु गाँव छोड़ते हैं, लेकिन समाज में व्याप्त वासनांध लोग उनकी गरीबी का फायदा उठाकर उन्हें जीवन से तिरस्कृत करने की कोशिश करते हैं। 'खानाबदोश' में कहानीकार ने एक ओर दलितों के जीवन में स्थित निवास की समस्या को उजागर किया है, साथ-साथ सवर्ण समाज में स्थित कामांध वृत्ति पर व्यंग्य भी किया है। सुकिया और मानौ ये गरीब पति-पत्नी अपना गाँव छोड़कर ईट तैयार करने की भट्टे पर काम कर रहे हैं। उनका सिर्फ एक ही सपना है कि खुद का पक्की ईटों का घर। इसलिए दोनों पूरी लगन से अपना खून-पसीना एक करके रात दिन कड़ी मेहनत कर रहे थे। यहाँ की देखभाल असगर ठेकेदार करता था। एक दिन मुख्तार सिंह की जगह उनका बेटा सुबेसिंह भट्टे पर आया, मालिक कुछ दिनों के लिए बाहर चले गए थे। मुख्तार सिंह स्वभाव से बुरा था। उसने ईटं के भट्टे पर काम करनेवाली किसनी को अपने जाल में फंसाकर उसकी जिंदगी बरबाद कर दी। किसनी अपने पति महेश की कुछ भी न सुनती थी। किसनी जिस रास्ते पर चल रहीं थी वहाँ से वापस आना असंभव था।

मानों ने अपने पति से पक्की ईटों का घर बंधवाने की जिद की जिसके लिए रात-दिन मेहनत करने के बाद भी लगभग असंभव था। फिर भी मानो कहती है "कुछ भी करो तुम चाहो तो में दिन-रात काम करूंगी अपने गाँव में लाल सुर्ख ईटों का घर।" "मुझे एक पक्की ईटों का घर चाहिए। सुकिया और मानो अपने काम से मतलब रखते थे। लेकिन दोनों की गृहस्थी को सुबेसिंह की नजर लग जाती है। सुबेसिंह असगर ठेकेदार से कहता है आज मानो को दफ्तर बुलाओ। असगर जानता था कि यह शैतान है और सुकिया भी इस बुलावे पर हड़बड़ा गया। असगर ठेकेदार के साथ जयदेव जाता है। जयदेव एक ब्राह्मण लड़का है। वह सुकिया और मानो के साथ काम करता है। मानो की जगह जयदेव का आना सुबेसिंह को अच्छा नहीं लगता और बह जसदेव को पीटता है। आज जसदेव हमारे कारण पीटा गया इस कारण मानो उसे रोटी देने जाती है। लेकिन वह रोटी को टाल देता है। मानो उसे रंगे

हाथ पकड़ती है। ब्राह्मण उसके हाथ की रोटी कैसे खाएगा ? दलित स्त्रियों तो ऐसे परंपरागत ब्राहमणवादी व्यवस्था के संघर्ष को हमेशा से ही झेलती आयी है और उसके साथ जूझती आयी है। कौसल्या बैसन्त्री की आत्मकथा बताती है कि "दलित स्त्री दूसरी स्त्रियों की तरह केवल स्त्री नहीं होती। स्त्री होने के साथ-साथ वह दलित होने का दंश भी झेलती है। समाज में दलित और परिवार में स्त्री दोनों ही रूपों में वह उपेक्षा और उत्पीड़न की शिकार है। अपने पति पर पूर्णरूप से विश्वास रखनेवाली मानो पर सुबेसिंह का कोई असर नहीं पड़ता। फिर किसनी को बर्बाद होते हुए मानो ने देखा भी था। सुबेसिंह को भी लगने लगा था कि मानो को फुसलाना आसान नहीं। उसकी कोशिशें धाराशाही हो जाती हैं। इसलिए वह दूसरे ढंग का इस्तेमाल करता है। मानो और सुकिया को तंग और परेशान करना ही वह एकमात्र कर्तव्य समझने लगता है। लेकिन सुका और मानो जैसे गरीबों को तंग करना कहा का पुरुषार्थ है। इस संदर्भ में डी. आर. नीम कहते हैं "ये लोग सभी प्रकार से कमजोर है, वह सामाजिक, राजनैतिक, धार्मिक तथा आर्थिक पहलुओं पर सवर्णों का मुकाबला नहीं कर सकते।" सुबेसिंह ने अपनी कपट बुद्धि से आखरी चाल चली। मानो और सुकिया ने जो कच्ची ईट बनाई थी उसे बेदर्दी से रौंद डाला, कुचल डाला था। इससे उनकी रात-दिन की कड़ी मेहनत बेकार हो जाती है। अपने सपनों की पूर्ति करने हेतु रात-दिन की कड़ी मेहनत करके जो ईटें बनाई थीं उसकी दयनीय अवस्था देखकर मानों की चीख निकल पड़ी। "मानो का हृदय फटा जा रहा था, टूटी-फूटी ईटों को देखकर वह बौरा गई थी। जैसे किसी ने उसके पक्की ईंटों के मकान को ही धाराशाही कर दिया था।" दूसरी ओर ठेकेदार ने सुबेसिंह के शिकवे पर साफ कहा कि टूटी-फूटी ईटो की मजदूरी नहीं मिलेगी। सुकिया भी दुःखों के सागर में डूब गया। उसने मानो का हाथ पकड़ा और कहा 'चल' ये लोग हमारा घर ना बसने देंगे। उनका सपना टूटकर 'खानाबदोश' हो गया। वे दोनों बेघर मन से सपने को सपना ही बनाकर भारी मन से अगले पड़ाव की तलाश में यात्रा पर निकल पड़े जो सिर्फ दिशाहीन है। स्पष्ट है कि उक्त कहानी दलितों की निवास समस्या का उद्‌घाटन करती है और कुलीन समाज की कामांध मनोवृत्ति पर प्रहार भी करती है।

5. नौकरी में उन्नति की समस्या :

नौकरी में जाति के कारण प्रमोशन मिलता है लेकिन जातीयता के कारण मिले हुए प्रमोशन में जाति ही रूकावट बनती है और आर.बी. के विरोध में दफ्तर के सारे लोग उसे कहीं ना कहीं फँसाने की कोशिश करते हैं ताकि किसी तरह प्रमोशन रूक जाए। ऐसी समस्या पर 'कुचक्र' कहानी में ओमप्रकाश वाल्मीकि ने अपनी प्रखर दृष्टि डाली है। 'कुचक्र' कहानी में आर. बी. नामक एक एस.सी. युवक है। उसके खिलाफ थाने में निशिकांत ने रिपोर्ट दर्ज की है, इसलिए पुलिस उसे पकड़ कर ले गई है। निशिकांत का कहना है कि आर.बी. ने रात में गुंड़ों के साथ उसकी पिटाई की लेकिन वास्तविकता यह है कि आर.बी. ने गुंडों से निशिकांत को बचाया था। आर.बी. को फँसाने की उसकी यह चाल थी। कारण यह था कि आरक्षण के कारण आर.बी. का प्रमोशन होनेवाला है जो दलित है और दलित आर.बी. के अधीनस्थ काम करना निशिकांत की सवर्ण मानसिकता पर गहरा प्रहार है। इसलिए वह प्रमोशन रूकवाने के लिए बड़े अफसरों से आर.बी. की शिकायत करता है। निशिकांत के मन में सिर्फ एक बात है। आर. बी. की निचली जाति और उसका होनेवाला प्रमोशन। जो आरक्षण से होनेवाला है। आरक्षण संबंधी चंद्रभान प्रसाद लिखते हैं- "रिजर्वेशन

या आरक्षण स्वयं में कोइ सिद्धांत या दर्शन नहीं बल्कि प्रतिनिधित्व के सिद्धांत को प्राप्त करने को एक तकनीकी विधि है। पर भारत के तबके ने संचार माध्यमों के जरिए प्रतिनिधित्व के सिद्धांत को बार-बार आरक्षण का नाम देकर प्रचारित किया।" फिर इस प्रमोशन में सिर्फ आर.बी. ही नहीं, बाकी लोग भी थे। फिर निशिकांत का आर.बी. पर जलना और गुस्सा करना पूर्णतः गलत है।

आर. बी. पुलिस को बता रहा था कि मैंने निशिकांत को मारा नहीं बल्कि उसे गुंडोसे बचाया है और जीन गुंडों ने निशिकांत को पीटा है। उन्हें वह जानता भी है। फिर भी पुलिस आर. बी. पर भरोसा नहीं करती। उसके साथ निशिकांत ने ऐसा क्यों किया इन विचारों में वह डूब जाता है। "आर. बी. और निशिकांत एक ही सेक्शन में काम करते थे। सब कुछ ठीक चल रहा था। लेकिन जिस रोज यह खबर फैली की हेडक्वार्टर से आनेवाली प्रमोशन सूची में आर. बी. का नाम भी है, दफ्तर में मातम से छा गया था। जैसे सब का हक्क छिनकर आर. बी. को दिया जा रहा हो। आर. बी. के समकक्ष या उससे वरिष्ठ पदों कार्यरत कर्मचारी ही नहीं, आर. बी. से कनिष्ठ कर्मचारी भी कटने से लगे थे।" इस संदर्भ में सुदेश तनवीर का कथन दृष्टव्य है "दलित के साथ भेदभाव का व्यवहार न केवल उच्च जातियों द्वारा होता है बल्कि निचली मानी जानेवाली शुद्र जातियों द्वारा भी होता है।"

एक दिन जब निशिकांत अपने बड़े अफसर शर्मा से आर बी. के बारे में शिकायत कर रहा था तब आर. बी. ने उसे पकड़ा। इस बात को लेकर दोनों में तू-तू मैं-मैं हो जाती है। दफ्तर का सारा वातावरण बदल गया। सभी दफ्तर के लोग आर. बी. से सिर्फ निचली जाति और उसका प्रमोशन के कारण बुरा बर्ताव करने लगे। "आरक्षण से होनेवाली प्रमोशन गैर अनुसूचित जाति के कर्मचारियों को अन्यायपूर्ण लगते हैं। आर. बी. कुछ अलग-थलग सा पड़ गया था। इस झगड़े के कारण आर. बी. के पीछे निशिकात जी जान से पड़ा था। उसे फंसाने के लिए अनेक तरह के हथकंडे इस्तेमाल किए। फिर भी आर. बी. नहीं फैसा। आखिर में दूसरों का इल्जाम निदर्दोष आर. बी. पर लगा दिया। निशिकांत ने जिसके कारण आर. बी. पुलिस थाने में फँस गया। स्पष्ट है कि उक्त कहानी में लेखक प्रमोशन के कारण खड़ी हुई समस्या को प्रस्तुत करता है।

६. मजदूरों की जातिवादी मानसिकता कि समस्या :

भारतीय समाज को जाति पाँति का जो कलंक लगा है उससे न जाने कब छूटकारा मिलेगा ? इस सुंदर देश का यह विवित्र रोग है। भारतीय संस्कृति में प्राचीन काल से दलितों को बहिष्कृत और अस्पृश्य माना गया है। ईमानदारी से निष्काम सेवा इनका एकमात्र कर्तव्य रहा है। ऐसे ही एक प्रामाणिक युवक की कथा को ओमप्रकाश जल्ने 'प्रमोशन' इस कहानी

के माध्यम से अभिव्यक्ति दी है। मजदूर वर्ग वस्तुतः निम्न वर्ग है, किंतु इस वर्ग में आनेवाले लोगों में अर्थात मजदूरों में भी जातिवादी मानसिकता एक समस्यामूलक है। 'प्रमोशन' कहानी में सुरेश की स्वीपर से अकुशल कामगार पद पर पदोन्नति हो जाने से वह भावहीन होकर पूर्ण आनंदित मन से सबसे पहले यह खबर अपनी पत्नी को बताने के लिए हर्षोत्साही वातावरण में अपनी सायकल से घर चला जाता है। वह चाहता था कि पूरी बस्ती में मिठाई बाँटे पर पैसे? इस एहसास से वह दुःखी होता है। यह खबर पत्नी को सुनाने के पश्चात, दरिद्रता के जर्जर में फँसी पत्नी तनख्वह कितनी बढ़ी? यह सवाल पूछती है। इसपर सुरेश कहता है "तू हमेशा पैसों के ही बारे में ही सोचेगी। मान- अपमान भी तो कुछ होता है। अरी पगली अब हम 'भंगी' नहीं रहे मजदूर हो गए हैं, मजदूर ।" मजदूर पर उसने कुछ खास जोर दिया था। उसके मन में सिर्फ एक ही नारा गूंज रहा था, जो उसने मजदूर रैली में देखा और सुना था। अभी इस पदोन्नति से वह भी इस रैली का हकदार बन गया था। इन्कलाब जिंदाबाद मजदूर मजदूर भाई-भाई, लेकिन उस बेचारे को क्या पता था कि जिस जाति में उसने जन्म लिया है उसका कलंक हमेशा उसके साथ रहेगा। हिंदू समाज में दलितो के लिए नीच जाति का होना ऐसा अभिशाप है जिससे से उन्हें मानव होकर भी समाज जीवन में तुच्छता से देखा जाता है। जानवरों को भी उच्च समाज की नजरों में स्थान है लेकिन दलितों के प्रति अमानवीय व्यवहारों के कीटाणु ही उनके खून में छिपे है। राम अवतार पांडे के कारण सुरेश की पदोन्नति हुई थी। वह भी सुरेश को कहता है "सुरेश हमने कहा था न कि एक दिन तुम्हे लेबर बनवा देंगे। अब कुछ पार्टी वार्टी हो जाए। वह लाल झण्डे युनियन का सदस्य भी बन गया था। सुरेश प्रामाणिक काम के साथ सभी सभाओं रैलिओं में और मजदूरों के साथ सम्मिलित भी होने लगा था। पांडे के भाषण से सुरेश काफी प्रभावित होता था। लेकिन सुरेश के उत्साही जीवन में जाति के कारण अचानक बदलाव आ जाता है जिसके कारण उसकी अस्तित्वहीन संवेदना जाग जाती है। वर्कशॉप में दूध लाना और सब मजदूरों को बाँटना यह डयूटी हर रोज किसी न किसी वर्कर पर आ जाती थी। एक दिन सुरेश को भी यह डयूटी सौंपी गयी। ।। सुरेश दूध दूध लेकर आया और मजदूर भाईयों को आवाज दी। लेकिन मजदूरों में कोई भी हलचल दिखाई न दी। "सुरेश दूध दूध की केन के पास खड़ा उनके आने का इंतजार कर रहा था। जब घंटे भर तक भी कोई दूध लेने नहीं आया तो उसकी परेशानी बढ़ गयी। उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि वह क्या करे। ज्यादा देर होने पर दूध फट सकता था।" सुरेश इस भाई-भाईयों के वर्णवादी स्वभाव से अपरिचित था। कुछ नहीं होगा इन भाई-भाईयों के नारे से क्योंकि यह भाई-भाई का नारा सिर्फ दिखावा है। ब्राहमणवादी समाज रचना ने न जाने कितने दलितों को कमजोर बना दिया है। डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर ने अपने दलित मजदूरों के संदर्भ में कहा है- "इस देश के दलित मजदूरों को दो महत्त्वपूर्ण शत्रुओं से सामना करना है और वे दो शत्रु हैं ब्राहमणवाद और पूँजीवादी सत्ता।" सुरेश सिर्फ दलित है इसलिए सामाजिक सहयोग से भी उसे वंचित रहना पड रहा था। डॉ. बलवंत साधु कहते है" दलित मानवी प्रगति में सब से पिछड़ा और दबाया हुआ सामाजिक वर्ग" यहा सुरेश को भी ऐसे ही हालात से गुजरना पड़ रहा था। बेचारा सुरेश दूध की रखवाली कर रहा था। आखिर उसने सुपरवाईजर गौतम साहब से शिकायत की। हर रोज दूध पर टूटनेवाले मजदूर आज अचानक ? उनकी समझ में भी नहीं आ रहा था कि आखिर हो क्या गया है?

गौतम साहब ने अब्दुल को विश्वास में लेकर पूछने पर वह बताता है “साहब आपको पता नहीं सुरेश स्वीपर है... उसके हाथ की चीज कोई कैसे खा-पी सकता है।“ अब्दुल के इस कथन से पता चलता है कि भारतीय एकात्म जीवन कितना खण्डित हो गया है। यहाँ गंगाधर पानतावणे का कथन द्रष्टव्य है “अस्पृष्यता से भारतीय एकात्म जीवतु खण्डित हुआ है, जाति व्यवस्था के निर्मूलन के सिवा देश संपन्न और समृद्ध नहीं होगा।“ “सुपरवाईजर को भी लगा जैसे वर्कशॉप की छत उसके सिर पर गिर पड़ी है और उसका वजूद मलबे में दब गया है। उसने जोर से आवाज दी उस पांडे को बुलाकर लाओ। दलितों का सिर्फ मतलब के लिए फायदा उठाना यही कथन दुबारा स्पष्ट हुआ है। मजदूर-मजदूर भाईयों के बीच जातिवादी भावना पर ओमप्रकाश वाल्मीकि ने गहरा आक्रोश प्रकट किया है। मजदूर जैसे निम्न दर्जे के कर्मचारियों में भी जातिवादी मानसिकता रहा करती है जिसका चित्रण ओमप्रकाश वाल्मीकि ने यथार्थता से किया है।

7. शिक्षा की समस्या :

दलितों पर अत्याचार सभी क्षेत्र में होते आये हैं। फिर मेडिकल कॉलेज की यथार्थता को ओमप्रकाशजी कैसे छोड़ते? अपनी ‘घुसपैठिये’ कहानी में दलित छात्रोंपर होते अन्याय का पर्दा फाश किया है। उक्त कहानी में फाइनल वर्ष की सुजाता की मौत के बाद मेडिकल कॉलेज में सुभाष सोनकर की यह दूसरी मौत हुई। आखबारों ने इसे आत्महत्या का मामला बनाकर नजरअंदाज किया। एक ही साल में मेडिकल कॉलेज में दो-दो हत्याओं के बाद भी शहर गूँगा ही रहा। सुभाष सोनकर का सिर्फ इतना अपराध था कि उसके माता-पिता उसे डॉक्टर बनाना चाहते थे। रमेश चौधरी सामाजिक कार्यकर्ता है। वे एक दिन राकेश साहब को फोन पर सुभाष सोनकर की मौत की खबर सुनाते हैं। राकेश साहब को इस बात से बहुत दुःख होता है और भूतकाल की घटना उनके मन पर दस्तक देने लगती है। रमेश चौधरी मेडिकल कॉलेज के चार लड़कों को लेकर राकेश साहब के घर आये थे। उन चार लड़कों में सुभाष सोनकर भी था। अपने मेडिकल कॉलेज में दलित छात्रों पर होते अत्याचार की हालत बता ने के लिए वे चार लड़के रमेश चौधरी के साथ आए थे। उनमें से अमरदीप ने राकेश साहब को जो बातें बताई वे सिर्फ यातनागयी और दलित छात्रों को आत्महत्या के लिए प्रवृत्त करने लायक है।

“कल पूरा दिन होस्टेल के एक कमरे में विकास चौधरी और सुभाष सोनकर को दरवाजा बंद करके पीटा गया।“ रंगींग होती तो फर्स्ट इअर के सभी छात्रों के साथ होती। लेकिन सिर्फ इन दोनों को पीटा गया था। अमरदीप हालात का ब्यौरा दे रहा दलित छात्रों को अलग खड़ा करके अपमानित करना तो रोज का किस्सा है। प्रवेश परीक्षा के प्रतिशत अंक पूछकर धज्पड़ या घूंसों का प्रहार होता है। जरा भी विरोध किया तो लात पड़ती है। यह दो-चार

दिन नहीं साल साल चलता है। यह पिटाई कॉल□ज या छात्रावास तक ही सीमित नहीं है। शहर में कॉल□ज तक जान□वाली बस में भी पीटाई होती है। कोई एक सीनियर चलती बस में चिल्लाकर कहता है" इस बस में जो भी चमार स्टूडेंट हैं वह खड़ा हो जाए... फिर उस□ धाकियाकर पिछली सीटों पर ल□लाया जाता है, जहाँ पहल□स□बैठ□सीनियर लात घुसों स□ उसका स्वागत करत□हैं।" कैसी है यह जाति व्यवस्था जिसस□दलितों को त्रस्त किया है। यहाँ सुद□ा तनवीर का कथन द्रष्टव्य है "वर्ण और जाति व्यवस्था स□दुष्प्रभावित शिक्षा-व्यवस्था दलितों क□मन-मस्तिष्क को कुंद किए बिना नहीं छोड़ती।" बिना बात क□किसी को पर□ाान करना और इसक□पीछ□का कारण और मानसिकता सिर्फ जाति ! कितना दुःखदायी है यह सब ? एक दिन प्रणव मिश्रा न□सोनकर को भी बस में ब□र्दी स□पीटा था और बाबासाह□ क□नाम पर गाली दी थी। इतना ही नहीं लड़कों को होस्टल नं, एक में घुसन□नहीं दिया जाता सिर्फ दो नं. में ही रखा जाता है, और गर्ल्स होस्टल की भी यही स्थिति थी। कॉल□ज क□मैन□जमेंट को दलितों का म□डिकल कॉल□ज आना अतिक्रमण लगता है। प्रैक्टिकल परीक्षा में भी भ□दभाव किया जाता है। भारतरत्न डॉ. बाबासाह□ आंब□डकर को भी ऐस□कई प्रसंगों का सामना करना पड़ा था। "डॉ. आंब□डकर अपनी सारी जिंदगी इसी छुआछूत और जाति व्यवस्था स□संघर्ष करत□रह□ व□इस□हिंदू वर्ग का विशाक्त रोग मानत□थ□ उन्होंन□उस□इस अमानवीय रोग स□मुक्त करन□का यथाशुक्य प्रयत्न किया पर व□सफल नहीं हो पाय□"" परिणामतः आज भी हमार□समाज में ऐस□विचित्र प्रकारों का सामना दलितों को करना पड़ रहा है। जाति प्रथा में डूब□"विपरीत बुद्धिवाल□प्राणी सर्वत्र विपरीत ही सोचत□हैं और द□खत□ हैं। व□कहत□भी उल्टा है और विचार भी उनक□उल्ट□ही होत□हैं।" स्पष्ट है कि हरिकिशणदास आग्रवाल क□विचार जैसी ही सदणों क□मानसिकता लगती हैं। ऐस□ही विचित्र और उल्ट□ विचारों स□नाहक ब□कसूर दलित बलि हो रह□हैं। म□डिकल कॉल□ज की डिन डा. भगवती उपाध्याय का कहना है कि आरक्षण स□म□डिकल का स्तर गिर रहा है। आरक्षण स□म□डिकल कॉल□ज में प्रव□ा पाना उन्हें भी 'घुसपैठ' लगती है। राक□श साहब न□य□हालत चुप चाप सुन लिए। बहुत जगह कोशिश करन□पर भी इनक□प्रति रवैया नहीं बदला। राक□श साहब तो क्या करत□? "सोनकर को पहली ही परीक्षा में फ□ल कर दिया गया था। क्योंकि उसन□ प्रणव मिश्रा क□खिलाफ पुलिस में नामजद रपट लिखान□का दुस्साहस किया था। डीन और अन्य प्रोफ□सरों तक शिकायत पहुँचन□की हिमाकत की थी, यह भूलकर कि वह इस चक्रव्यूह में अक□ला फँस गया है, जहाँ स□बाहर आन□क□लिए उस□कौरवों की कई अक्षौहिणी स□ना और अन□क महारथियों स□टकराना पड़□गा। परीक्षाफल का व्यूह भ□दकर सोनकर बाहर नहीं आ पाया था। और उसक□जीवन की यात्रा विवशता वश समाप्त हो गई। सवर्ण क□अत्याचारों स□और एक ब□कसूर दलित छात्र मारा गया। फोन किसी तरह रखन□का प्रयास करत□हुए राक□श धम्म स□कुर्सी में धंस गया और उसक□मुंह स□वाक्य निकला "सोनकर यह क्यों किया तुमन□"सुवर्णों की मंडली और उनक□घटिया विचार और कममों स□नाहक निर्दोष सोनकर की जान गई। आज दलितों का प्रमुख सृजनात्मक लक्ष्य यह है कि सभी प्रवंचित, पीड़ित लोगों को पहचान कर उनक□प्रति न्याय कर□ जातीय पूर्वाग्रह क□कारण निर्दोष सोनकर को मृत्यु गणतंत्र व्यवस्था और सवर्ण व्यवस्था पर गहरी अलोचना करती है। कहना होगा कि उक्त कहानी म□डिकल कॉल□ज क□दलित छात्रों को किन यातनाओं स□गुजरना पड़ता है इस पर कटु प्रहार करती है।

८. परंपरागत व्यवसाय को स्वीकारने की समस्या :

परंपरा के कारण न चाहते हुए सवर्णों की प्रस्थापित और स्थापित व्यवस्था की वजह से दलितों को अपनी मर्जी के खिलाफ व्यवसाय करना पड़ता है। इससे दलितों को आय से ज्यादा अपमान का सामना करना पड़ता है। ओमप्रकाश वाल्मीकि ने 'बैल की खाल' नामक कहानी में काले और भूरे को परंपरागत व्यवसाय मजबूरन करने वाले दलितों के रूप में प्रस्तुत किया है। पंडित बिरिज मोहन का बैल मरने से अचानक गाँव को काले और भूरे की आवश्यकता महसूस होती है। क्योंकि ये दो ही थे जो गाँव के मरे हुए प्राणियों को गाँव से बाहर ले जाने का व्यवसाय करते थे। बैल को गाँव से बाहर ले जाना आवश्यक था क्योंकि वह गांधियाने लगा था। उस पर मक्खियाँ भी भिनभिनाने लगी थीं। स्वयं पंडित तीन-तीन बार उनके घर जा चुके थे। पंडित बिरिज मोहन को बहुत क्रोध आया था। गाँव में किसी का भी मवेशी मरता तो उसे उठा ले जाकर बाहर फेंकना यह जिम्मेदारी काले और भूरे की थी। इसके बदले इन्हें कोई पैसे या अनाज नहीं देता। सिर्फ इसलिए ये दोनों निस्पृह भाव से काम करते थे कि उनके पुरखे पिछली कई पीढ़ियों से यह काम करते आये थे। मरे हुए प्राणियों की खाल उतारकर उससे जो भी पैसे मिलते उससे ही जीविका चलानी पड़ती। खाल के सिवाय इनको कोई दूसरा व्यवसाय नहीं था। आय के लिए मरे हुए प्राणियों का इंतजार ही इनके लिए आय की आशा थी। गरीब लोगों की स्थिति ही ऐसी होती है। डॉ. अर्जुन चव्हाण जी ठीक ही कहते हैं "इस वर्ग की स्थिति उच्च निम्न वर्ग से बदतर होती है, ये लोग प्रतिदिन रोजगार पाने में असमर्थ होते हैं। इन्हें एक दिन काम मिलता है तो दो दिन बेकार रहना पड़ता है। इनकी आर्थिक प्राप्ति का न कोई साधन होता है और न कोई निश्चित मात्रा।" काले और भूरे का कोई अता-पता न था। दोपहर की परछाई धीरे-धीरे लंबी हो रही थी। तब दोनों का आगमन होता है, क्रोधित पंडित बिरिज मोहन उन पर बिफर पड़ता है- "कहाँ मर गए थे भोसड़ी के. . . . तड़के से ढूँढ़ ढूँढ़ के गोड्डे टूट गए हैं। और इब आ रहे हो महाराजा की तरियो इस बैल को कौन उठावेगा तुम्हारा बाप जितना कष्ट उन दोनों को ऐसे काम (व्यवसाय) से होता था उस हिसाब से उन्हें पैसे नहीं मिलते। सिर्फ पुरखों से यह काम होता आ रहा था, याने परंपरा ने यह काम उनपर सौंपा था वह भी उनकी मर्जी के खिलाफ क्या है, और कैसी है ये परंपरा आदि कहते है- "जब पीढ़ी दर पीढ़ी की गुलामी ने उनके माथे पर जाति लिख दी तब अपमान सहते हुए अपने अतीत की खोज में निकले तभी वह जान पाए कि हमारा भी कभी इतिहास रहा है दलित युगों-युगों से शोषित रहे हैं। उक्त कहानी को पढ़ने से मन पीडित होता है कि कैसी है ये शोषण करनेवाली परंपरा और यह परंपरागत व्यवसाय ? क्या ऐसे परंपरागत व्यवसाय दलित जीवन के दुःख और समस्याओं पर और अधिक प्रभाव नहीं डालते? क्या गैर दलित कभी इस पर विचार करते हैं? आखिर कब ये स्थिति दलितों को लाचारी की जिंदगी त्यागकर अभिमान से जीना सिखाएगी? कैसी है यह विचित्र वर्ण व्यवस्था जिसने दलितों के मन मस्तिष्क को रौंद डाला है। इस संदर्भ में वाल्मीकि जी ही कथन द्रष्टव्य है- "भारतीय समाज में वर्ण एक सच्चाई है जिसने सदियों से इस देश के जनमानस को टुकड़ों में ही नहीं बाँटा उनके

मानवीय संस्कारों को भी छिन्न भिन्न किया है। इसमें जाति और परंपरा के कारण अपमानित होकर अपनी मर्जी के खिलाफ काम करनेवाले काले और भूरे की परंपरागत व्यवसाय को स्वीकारने की विवशता की समस्या को ओमप्रकाश वाल्मीकि ने प्रस्तुत किया है।

निष्कर्ष :

ओमप्रकाश वाल्मीकि की कहानियों का मूल्यांकन करने के पश्चात् मेरा यह निष्कर्ष निकलता है कि उनकी अधिकांश कहानियों में दलितों के शोषण और उन पर किए गए अत्याचार को वाणी दी है। स्वयं ओमप्रकाश वाल्मीकि ने जातिय दंश के जहर से जितना सामना किया है उससे कई ज्यादा भोगा भी है। इसीलिए उनकी कहानियाँ जातिवादी समाज की गंदी मानसिकता को समग्र रूप में प्रस्तुत करने की सफल कोशिश करती है। उनकी कहानियों में दलित जातियों को केंद्र में रखकर ही विषय-विविधता मिलती है। उनकी कहानियों दलित जातियों के कड़वे सच और उनके जीवन की व्यापकता को उजागर करके दलित जीवन की यथार्थता को रूपायित कर प्रगतशील विचारों की माँग करती है। विवेच्य रचनाकार की अधिकांश कहानियाँ समस्या प्रधान हैं। इन कहानियों में मानव संवेदना को जगाने की चुनौती है। लेखक ने जातिवाद की समस्या को प्रमुख रूप में उभारा है जिसमें कोई भी बात अव्युक्तिपूर्ण नहीं। ओमप्रकाश वाल्मिकि की कहानियाँ दलित जीवन की यथार्थ स्थिति, दशा और बहुत सारे प्रश्न्न लेकर प्रस्तुत हुई हैं। इनमें दलितों के साथ हुए अत्याचार, अनाचार, लूट, शोषण, यातना और प्रताड़ना आदि समस्याओं के मूल कारणों पर प्रकाश डाला गया है। विवेच्य कहानियों में जाति-समस्या के साथ-साथ परंपरा के निर्वाह और परंपरागत व्यवसाय की कुछ समस्याओं का भी चित्रण हुआ है है। निर्दोष दलित को गोहत्या के जुर्म में सजा दी जाती हैयह समस्या तो महाभयानक रूप धारण करती है। कुछ लोग जाति की हीनता के कारण दबे रहकर कुछ गलत कदम उठाते हैं और विचित्र स्थिति का सामना करने के लिए मजबूर हो जाते हैं। बलिप्रथा की समस्या आदमी को कहीं का नहीं छोड़ती इसका महत्त्वपूर्ण उदाहरण 'भय' कहानी में मिलता है। साहुकार द्वारा अनपढ़ लोगों की लूट प्रखर रूप में प्रस्तुत हुई है। नौकरी में जाति के कारण, प्रमोशन तो मिलता है लेकिन यही जाति उसके प्रमोशन के पश्चात सेवा कार्य में रूकावट बन जाती है। अपने जाति की श्रेष्ठता और दूसरी जाति की कनिष्ठता का यह प्रस्तुतीकरण जातिवाद को बढ़ावा देनेवाला है। दलितों के हाथों दूध न पीने की समस्या गरीब दलित मजदूर सुरेश की भावनाओं के साथ खिलवाड़ करती है। मेडिकल कॉलेज में दलितों पर हुए अत्याचार और उनका शोषण याने इन्सानियत की निंदा है। दलितों में भी उच्च- नीच की समस्या है, जिसके कारण बेकसूर मासूम बच्ची की जान जाती है। ऐसी असहाय घटना को भी वाल्मीकि ने बेहिचक प्रस्तुत किया है। स्वातंत्र्योत्तर काल में भी दलित समस्या व्यापक रूप धारण कर चुकी हैं, वह कम होने की अपेक्षा अधिक तीव्र दिखाई देती है। वाल्मीकि की कहानियों में दलित जीवन की विवशता ही अधिक दृष्टिगोचर होती है। ऐसी स्थिति में ओमप्रकाश वाल्मीकि अपने आप को रोक नहीं पाए और अपना कर्तव्य समझकर अपनी लेखनी को उन्होंने मुक्त किया। परिणाम स्वरूप उनकी कहानियों ने यथार्थता को साक्षी मानकर जन्म लिया। खुद दलित होने

से वे अनुभवदग्ध जीवन से उबलकर निकले हैं इसलिए अपनी धड़कनों को पात्रों के माध्यम से कहानियों में अंकित करने की कोशिश की है।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची :

दलित साहित्य प्रवाह आणि प्रतिक्रिया प्रा. अरूण कांबळे - पृ.सं : 76

दलित साहित्य का सौन्दर्य शास्त्र ओमप्रकाश वाल्मीकि - पृ.सं : 94, 95

'हंस' मासिक, जून 2000 - राजेंद्र यादव - पृ.सं : 160

'नया मानदंड़' अप्रैल-जून, 2003 संपा. कुसुम चतुर्वेदी - पृ.सं : 37

सलाम, ('सपना' कहानी से) ओमप्रकाश वाल्मीकि - पृ.सं : 29

बजरंग बिहारी तिवारी हंस, दिसंबर, 2001-पृ.सं : 25